Peer Reviewed and Refereed Journal ISSN (Online) 2583-181X

International Journal of Humanities, Social Science, Business Management & Commerce (IJHSSBMC)

A Quarterly International Research Journal of Humanities, Social Science, Business Management & Commerce

SRJIF Impact Factor (2023): 8.1

Editor-in-Chief
Dr. Anant N. Shinde

Infinity Academic & Research Association, Chatrapati Sambhajinagar (MS) INDIA

50	२१वीं सदी के हिंदी कहानी साहित्य में चित्रित किन्नर विमर्श - प्रा. मारुफ मुजावर	265 – 269
51	विपिन बिहारी के उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन - कोमल अरविंद फटांगरे	270 – 273
52	२१वीं सदी के हिंदी काव्य में चित्रित हाशिए का समाज (प्रातिनिधिक रचनाओं के संदर्भ में) - डॉ. सविता लालासो नाईक निंबालकर	274 – 279
53	२१वीं सदी के हिंदी उपन्यासों में चित्रित हाशिए का समाज (भगवानदास मोरवाल कृत 'काला पहाड़' के विशेष संदर्भ में) - प्रा. डॉ. गोरखनाथ किर्दत	280 – 283
54	'डांग' उपन्यास दस्यु जीवन का दस्तावेज - प्रा. डॉ. गजानन चव्हाण	284 – 288
55	निर्मला पुतुल का काव्य : हाशिए के रूप में आदिवासी स्त्री - प्रो. डॉ. सुनील बापू बनसोडे	289 – 292
56	'काला पादरी' में चित्रित हाशिए का समाज (आदिवासी विमर्श के संदर्भ में) - मलिका शाकुर पकाली; प्रो. डॉ. सुनील बापू बनसोडे	293 – 297
57	"थर्ड जेंडर की कहानियाँ" में चित्रित हाशिए का समाज (किन्नर समाज के संदर्भ में) - अनुताई नागनाथ झोंबाडे; प्रो. डॉ. सुनील बापू बनसोडे	298 – 301
58	डॉ. युवराज सोनटक्के के कविता संग्रह अग्निध्वजा में शोषित वर्ग का चित्रण - प्रा. डॉ. गोरख निळोबा बनसोडे	302 – 310
59	हरिराम मीणा के 'धूणी तपे तीर' उपन्यास में चित्रित आदिवासी समाज - प्रा. डॉ. हेमलता काटे	311 – 314
60	२१वीं सदी के हिंदी उपन्यासों में चित्रित आदिवासी जन-जीवन (प्रातिनिधिक उपन्यासों के संदर्भ में) - प्रो. डॉ. नितीन धवडे; प्रा. संजय जाधव	315 – 320
61	सांस्कृतिक अर्थशास्त्र : एक अध्ययन - अकांक्षा दुबे	321 – 326

IJHSSBMC
ISSN (online) : 2583-181X

Open Access

International Journal of Humanities, Social Science, Business Management & Commerce
(An International Peer-reviewed & Refereed Scholarly Open Access Journal)
ISSN (Online): 2583-181X
Journal homepage: https://ijhsbc.iar-a.com/
Vol. 08, Issue 01, March 2024; Pages 311 – 314
DOI: 10.5281/zenodo.10669496
SRJIF Impact Factor (2023): 8.1

Original Research Article

हरिराम मीणा के 'धूणी तपे तीर' उपन्यास में चित्रित आदिवासी समाज

प्रा. डॉ. हेमलता काटे

हिंदी विभाग, बाळासाहेब देसाई कॉलेज, पाटण जिला: सातारा ४१५२०६ महाराष्ट्र, भारत

Corresponding author E-mail: hemlatakate@yahoo.in

Received: 05 February, 2024 | Accepted: 21 February, 2024 | Published: 22 February, 2024

दुनिया कहां की कहां पहुंच गयी है, फिर भी आज भी आदिवासी संघर्ष में पीस रहा है। उसका संघर्ष क्यों हैं? इसका उत्तर देने के लिए ही शायद आज अनेक साहित्यकार आदिवासियों के जीवन पर लेखन कर रह रहें हैं। जिसमें विद्रोही आदिवासी रचनाकारों में हरिराम मीणा का वशेष स्थान है। उन्होंने अपनी रचनाओं में आदिवासियों के जीवन का यथार्थ चित्रण किया है। साथ में आदिवासियों को संघर्षशील जीवन क्यों जीना पडा रहा है? उन्हें हाशिएं पर कौन रखता है? इसका चित्रण किया है। इनकी अब तक छह किताबें प्रकाशित हुई हैं। जिसमें विविध विधाएं हैं। कविता संग्रह, यात्रा वृतांत, प्रबंध काव्य और उपन्यास है। इसमें सन 2008 में लिखा उपन्यास 'धूणी तपे तीर' है। जिसके केंद्र बिंदू मनगढ आदिवासी ऑपरेशन है, जिसे आदिवासी 'जालियांवाला कांड' के नाम से जाना जाता है। कारण इस कांड में 'जालियांवाला कांड' से भी दो गुना स्त्री-पुरुष शहीद हुए थे, जिसमें विशेषता आदिवासी लोग हैं। इसीलिए किसी इतिहास कार या विद्वान की नजर उनकी तरफ नहीं गयी। आदिवासी समाज हमेशा से पिछडा हुआ समाज रहा। जिसे साहित्यकार हाशिए का समाज कहते है।

हाशिए का समाज अर्थात वे खास लोग हैं, जो मुख्य धारा द्वारा बहिष्कृत या उपेक्षित किए जाते हैं। ऐसे हाशिए के समाज में दलित, आदिवासी, स्त्रियां, किसान, मजदूर आदि की गणना कर सकते हैं। कारण इनकों समाज व्यवस्था में शिक्षा, सत्ता, संस्कृति और आर्थिक संसाधनों से वंचित कर हाशिए पर धकेल दिया जाता है। इनसाइक्लोपीडिया ऑफ पब्लिक हेल्थ' हाशिए के समाज को इन शब्दों में परिभाषित करता हैं, "हाशिए का समाज वह समाज होता हैं, जिसे किनारे लगा किया जाता है और इसतरह वह समाज केंद्र में स्थित विशेषाधिकारों और सत्ता से वंचित हो जाता हैं।"[१] परिणाम स्वरूप यह समाज चिरस्थायी भेदभाव का शिकार होते है। यह लोग विकास प्रक्रिया और उसके लाभ से वंचित रहते है। परंतु आज साहित्य का अपनी लेखनी के माध्यम से ऐसे लोगों को प्रवाह में ला रहे है। जिसमें हरिराम मीणा का नाम ले सकते है उन्होंने 'धूणी तपे तीर' उपन्यास लिखकर आदिवासी लोगों के भावनाओं को जागृत किया है। डॉ.

शंभूनाथ तिवारी लिखते उनके बारे में कहते हैं, "आदिवासी अंचल की इस ऐतिहासिक-वास्तविक घटना को इस उपन्यास में आधार बनाया गया है, इस घटना को अंतिम परिणति तक ले जाने के लिए उपन्यासकार ने बहुत श्रम किया हैं।"[२]

आदिवासियों की मूल समस्या अशिक्षा है। आज भी आदिवासियों को अशिक्षा में ही जीवन बिताना पड रहा है। उनके शिक्षा की समस्या को हरिराम मीणा 'धूणी तपे तीर' उपन्यास में गोविन्द गुरू के माध्यम से चित्रित किया है। जैसे, "मैं स्कूल में नहीं पढ़ा, लेकिन इधर-उधर से आखर ज्ञान सीख लिया। तुम भी सीखो। बच्चों को पढ़ाओ तभी वे समझदार बनेंगे। गाँव-गाँव में जो भी थोड़ा पढ़ा लिखा हो, उसका धर्म है कि अन्य लोगों को पढ़ाये। पढ़ाई घर के वातावरण से ही होती है इसलिए बड़े आदमी भी शिक्षा प्राप्त करें। राजा, जागीरदार, हाकिम की बेगार मत करो। इनमें से किसी का भी अन्याय मत सहो। अन्याय का मुकाबला बहादुरी से करो। गोविन्द गुरू जानते हैं इन सबके प्रति जागरूकता शिक्षा से ही संभव है जिससे आदिवासी समाज अभी बहुत दूर है।"[३]

अशिक्षा का यह परिणाम दिखाई देता है यह आदिवासी लोग अंध विश्वासों के बीच फंसे नजर आते है। लेखक लिखते है, "प्रकृति के साथ ए लोग परंपरागत अंधविश्वास पर विश्वास रखते हैं| वागड प्रदेश के इस अंचल की पहाडियों के चैन में खलल पडा, जंगल की शांत मुद्रा भंग हुई और गांव का बच्चा बच्चा जाग गया। प्रौढ औरत ने अपनी झोपडियों से काली हांडियां बाहर फेंकी। बुजुर्ग महिलाओं ने पत्थर की चक्की के पाटों को उल्टी दिशा में फिराया।"[४]

इसीकारण आदिवासियों को विकास की प्रभाव में लाना इतना आसान नहीं हैं। कारण भारत गावों का देश हैं, वहां आज भी जमीनदार, ठेकेदार और पूंजीपति जैसे लोगों का राज चलता है। वे आदिवासों को केवल मजदूर समजते है। उनकी राय होती है आदिवासियों को जीवन केवल श्रम और बेगारी करने के लिए ही हुआ है। परिमाण स्वरूप कितनी भी मेहनत करे आदिवासी धन जमा नहीं कर सकते। अत: ऐसे बेगारी की समस्या से जुझ रहे आदिवासियों का चित्रण हरिराम मीणा के 'धूणी तपे तीर' उपन्यास में मिलता है। आदिवासी समाज में ब्रिटीश शासन काल में अधिकांश इलाके में बेगार की समस्या दिखाई देती है। सरकार गांव के ठाकूर को बताती हैं और ठाकुर आदिवासियों को हुक्म ही देते थे। जैसे हरिराम मीणा लिखते है, "हर परिवार से अच्छी मेहनत कर सकने वाला एक आदमी इस काम में शामिल होगा। तुम्हारे लिए गमेती के कहने से मैं इतना रियासत देता हूं नहीं तो सारे मरद व औरतों से काम करवाता।"[५] अत: बेगारी आदिवासियों के लिए एक अभिशाप ही है। बेगार के नाम पर उनका शोषण होता है। यह शोषण ठाकुरों के माध्यम से होता है। प्रस्तुत उपन्यास में दलपति सिंह ऐसे ठाकुर है। जो ये भी अंग्रेज सरकार के आदेश के अनुसार चलता है। अंग्रेजी सरकार ने दलपति सिंह को शिकारगाह का काम सौंप दिया। आदिवासियों को यह काम दलपति सिंह को आदिवासियों से करवा लेना है, परंतु उस समय आदिवासियों का फसल कटाई का काम शुरू है। "माई-बाप, फसल की कटाई का काम सर पर है। पहले लोग यह काम पूरा कर लें जो पंद्रह दिन में हो जाएगा। उसके बाद बेगार करवाई जाए तो थोड़ी सहूलियत रहेगी अन्यथा राजा का हुकुम तो बजाना ही है। देख भाई मुखिया अब दरबार ने आदेश दिया है तो मुझे तो उसे पूरा करना ही है।"[६] अत: आदिवासियों को अपनी खेती-बाड़ी के काम को छोड़कर इस काम में शामिल होना है। ठाकुर आदिवासी इलाकों में जाकर बेगार करने के लिए आदिवासियों से कहता है। इस तरह बेगार के नाम पर होनेवाला शोषण हमें आदिवासी इलाकों में दिखाई देते हैं। कारण उन्हें छोटे-बडे कामों के लिए उन्हें जमीनदार पर ही आश्रित रहना पडता हैं। इस उपन्यास में लेखक ने सोदान पात्र के माध्यम से आदिवासियों के शोषण का वर्णन किया है। जैसे- सोदान गढ़ी के जमींदार के पास बेगार करता है। उसके एक छोटे से खेत में सरसों के फसल ओले की बारिश की वजह से बरबाद हो जाते हैं। खराब हुए फसल को देखकर सोदान बहुत ही दुःखी होता है। वह दुःख एवं परेशानी से मुक्त होने के लिए बेगार साथी

के पास जाकर "ठंड लग रही है। थोड़ी से दारू पिला दे भाई रामा, नहीं तो सर्दी से बीमार हो जाऊँगा और ठाकुर की बेगार पर नहीं जा पाऊँगा और ऐसा हुआ तो कोड़ों की मार पड़ेगी या दो दिन ज्यादा बेगार करनी पड़ेगी वह अलग सजा।"[७]

बेगारी से वे इतना धन नहीं जूटा पाते। परिमाण स्वरूप उन्हें जमीदार से कर्जा लेना पडता है। गरीबी के कारण वे तुरंत पैसे वापस नहीं कर सकते, परिणामस्वरूप उनसे लिया हुआ धन तिगुना से ज्यादा बढ जाता है। जिसके लिए उन्हें अपनी संपत्ती भी खोनी पडती हैं। इसके बारे में हरिराम मीणा के 'धूणी तपे तीर' उपन्यास में इस प्रकार चित्रण किया है, "सुदखोर महाजन कर्जा के झूठे-सच्चे कागद हिंदू और मुसलमान के नाम से बनाके रख छोडते हैं और झगडा करके उस सच्चे कर्जे में उन गरीबों के घर का माल असबाब व गाय, बैल, भैंस, बकरी वगैरह और जो भी सामान होता है उसे कर्जे में वसूल कर लेते हैं।"[८] इसतरह आदिवासियों को कर्जे के जाल में फंसाकार उन्हें कर्जे से उभारने नहीं दिया जाता था। इसका एक मात्र कारण आदिवासी अलग-थलग रहते है इसीलिए एकजूट होकर शोषण के विरोध में आवाज नहीं उठा पाते। ऊपर से आदिवासियो में खान-पान और वस्त्र की कमी दिखाई देती है। जैसे-"स्त्रियों नें रंग-बिरंगे कपडे पहन रखे थे, लेकिन उतने ही जिनसे शरीर मुश्किल से ढका जा सके और उनके बच्चों को जैसा होना चाहिए था, उन हालात में, वे वैसे ही थे- सांवले रंग के दुबले-पतले और नंग-धडंग।"[९]

परिणामस्वरूप आदिवासी जंगल को ही आधार मानकर चलते है। परंतु उस पर भी ब्रिटीशों ने पाबंदी लगा दी थी। उसके बाद से आदिवासी खेती कर जीवन बिताने लगे थे। परंतु उनकी खेती बारीश पर ही आधरित होती है। इसीलिए अगर बारीश ठीक ढंग से नहीं हुई तो उन्हें अकाल का भी सामना करना पडता है। इसका चित्रण भी हरिराम मीणा के 'धूणी तपे तीर' उपन्यास में किया है। यह वर्णन राजपूताना ए.जी.जी इस पात्र के माध्यम से किया है। जैसे ए.जी.जी भारत सरकार को पत्र लिखते है, "समस्त भारत में इस क्षेत्र की स्थिति सबसे खराब है। इस दुर्भिक्ष में हैंजा फैलने से अनेक आदिवासियों की मौत हो चुकी हैं, मरने वालों में डुंगरपुर, बांसवाडा रियासतों के 20 प्रतिशत और प्रतापगढ रियासत के 15 प्रतिशत लोग शामिल हैं। एक जगह पर चार आदिवासियों ने कुछ चांदी के गहने बेचकर आटा खरीदा, जिससे केवल एक ही रोटी बनी। उन चारों व्यक्तियों नें उस रोटी के चार टुकडे किए और बराबर बांट कर खाया। सन 1898-1900 ई. की अवधि में पडे अकाल के दौरान दक्षिण राजपूताना की पांचों रियासतों अर्थात मेवाड, डुंगरपुर, बांसवाडा कुशलगढ व प्रतापगढ इलाकों में भारी संख्या में आदिवासियों की मौत हुई। भूख इन्सान को कोई भी पाप करा सकती है।"[१०] आदिवासियों की आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण कमाने के लिए शहर में दाई, नोकरानी नौकरी करती नजर आती है। अत: उसे कमजोर मानकर उसे हीन दृष्टि से देखा जाता है।

निष्कर्षत: कह सकते है कि आदिवासी समाज हाशिये पर रहने के लिए के लिए राजाओं का प्रमुख हाथ रहा हैं साथ में ब्रिटीश आने के बाद यहां के ठाकुर, जागीरदार एवं मुखियों का इसमें स्थान रहा हैं। राजाओं ने आदिवासियों को बहुत संकट पहुँचाए हैं। उन्होंने आदिवासियों की जमीन हस्तगत कर ली है। कालांतर में ये भी ब्रिटिश सरकार के आदेश के अनुसार पालन करने लगे। वे ठाकुर, जागीरदार एवं मुखिया को अपने हाथ में रखकर पालन करते हैं। राजाओं की वजह से आदिवासी बेगार एवं लगान की समस्या का भार उनके कंधों के ऊपर पड़ गया। राजा ही जनता को संकट देगा तो और किससे पूछा जायेगा? यही आदिवासी जीवन की यथार्थ वास्तविकता है।

संदर्भ सूची

१. संपादक – प्रमोद रंजन एवं आयवन कोस्का, प्रकाशन – द मार्जिनलाइज्ड, दिल्ली बहुजन साहित्य की प्रस्तावना से
२. मनीष कुमार गुप्ता, आदिवासी समाज और हिंदी उपन्यास, अनुसंधान पब्लिकेशन एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, कानपुर, 2017, पृ. 70
३. हरिराम मीणा - धूणी तपे तीर, पृ. 70
४. वही, 535
५. वही, पृ. 64
६. वही, पृ. 63
७. वही, पृ. 47-48
८. वही, पृ. 152-153
९. वही, पृ. 274
१०. वही, पृ. 275